इकाई 3 मराठा राज्य व्यवस्था

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

यह इकाई भी अठारहवीं शताब्दी के मध्य में भारतीय राजनैतिक व्यवस्था की आंतरिक संरचना को समझने का एक प्रयास है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप —

- मराठा राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप संबंधी कुछ मतों का उल्लेख कर सकेंगे,
- अठारहवीं शताब्दी में मराठा राज्य संघ और उसके विस्तार पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- मराठों द्वारा स्थापित राजनीतिक और प्रशासनिक संरचना का वर्णन कर सकेंगे और इस प्रकार मराठों को "लुटेरा" कहे जाने के परम्परागत मत में सुधार ला सकेंगे,
- क्षेत्र विशेष की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को रेखांकित कर सकेंगे, और
- मुगल साम्राज्य, अन्य क्षेत्रीय शक्तियों और अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ मराठों के संबंध को निरूपित कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

सत्रहवीं शताब्दी के दौरान पश्चिमी दक्कन में छोटे मराठा राज्य का गठन हुआ। यह क्षेत्र कालांतर में मराठा राज्य का केन्द्र बिन्दु बना और अठारहवीं शताब्दी में तथाकथित दूसरे बड़े

मराठा स्वराज्य (संप्रभु राज्य) का विस्तार उत्तर, पूर्व और दक्षिण दिशाओं में हुआ।

दक्कन से मुगलों की वापसी के बाद मराठों ने अपने सैनिक नेताओं या सरदारों के नेतृत्व में मिला-जुला संघ या राज्य संघ स्थापित और विकसित किया। आरंभ में इन सरदारों ने अपने को राजस्व वसूली तक सीमित रखा, पर एक बार पैर जमा लेने के बाद उन्होंने इस पर वंशानुगत अधिकार जमा लिया। इस इकाई में पश्चिमी दक्कन में मराठा राज्य की स्थापना, उसकी नयी और शक्तिशाली राजनीतिक व्यवस्था पर प्रकाश डाला जा रहा है।

3.2 मराठा राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप पर इतिहासकारों का मत

साम्राज्यवादी इतिहास लेखन अठारहवीं शताब्दी के मराठा राज्य को अव्यवस्था और अराजकता का पर्याय मानता है। दूसरी तरफ राष्ट्रवादी इतिहास लेखन के तहत बहुत से मराठी इतिहास लेखक मराठा राज्य को हिन्दू साम्राज्य की पुनर्स्थापना का अंतिम प्रयास मानते हैं।

इरफान हबीब का मानना है कि मराठों का उदय वस्तुत: मुगल साम्राज्य के शासक वर्ग (मनसबदारों और जमींदारों) के खिलाफ जमींदारों के विद्रोह का प्रतिफलन था। वे मराठा राज्य के निर्माण में जमींदार वाले संदर्भ पर विशेष जोर देते हैं।

सतीशचन्द्र का मानना है कि मुगलों की जमींदारी व्यवस्था आय और व्यय के संतुलन को कायम रखने में असफल हुई और इस संकट का लाभ उठाकर मराठों ने क्षेत्रीय स्वतंत्रता स्थापित करने का सफल प्रयत्न किया।

सी. ए. बेली तीन लड़ाकू राज्यों (मराठा, सिक्ख और जाट) का उल्लेख करते हुए बताते हैं कि यह भारतीय-मुस्लिम कुलीन तंत्र के खिलाफ एक लोकप्रिय या कृषक विद्रोह था। उनके अनुसार मराठों ने साधारण कृषकों और चरवाहों की जाति से शक्ति अर्जित की, पर प्रशासन के उच्च पदों पर मराठा ब्राह्मणों का वर्चस्व रहने के कारण मराठा राज्य को "ब्राह्मण" राज्य के रूप में देखा गया। तीर्थ स्थलों और पवित्र पशुओं की रक्षा करना इसकी उल्लेखनीय जिम्मेदारी थी।

आन्द्रे विंक फितना की प्रक्रिया को मराठा राज्य व्यवस्था के सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु मानते हैं। इस प्रक्रिया के तहत राजनीतिक मनमुटाव और फूट का लाभ उठाया जाता था और सीधी सैनिक कार्यवाई के बदले दबाव तथा समझौते का सहारा लिया जाता था। इस प्रकार फितना एक राजनैतिक क्रियाविधि थी, जिसका उपयोग क्षेत्र विस्तार, सुदृढ़ीकरण और अंतत: मराठा शक्ति को संस्थागत रूप देने के लिए किया जाता था फितना के सही राजनैतिक समीकरण के लिए जनता का सहयोग और स्वीकृति भी आवश्यक समझी गयी। यह विजय प्राप्त करने के साथ-साथ कृषि स्रोतों पर अधिकार स्थापित करने के लिए भी जरूरी था।

17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में फितना द्वारा ही मराठों ने मुगल साम्राज्य के विस्तृत इलाकों पर कब्जा जमाया। उन्होंने मुगलों के खिलाफ विभिन्न दक्कनी सुल्तानों से गठबंधन किया। अंत:, विंक का मानना है कि मराठा संप्रभुता के उदय को मुगल साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह के रूप में देखने की अपेक्षा उसकी जड़ मुगल साम्राज्य के विस्तार में ही खोजी जानी चाहिए। मराठा स्वराज्य एक प्रकार की जमींदारी थी और मराठों ने वस्तुत: कभी भी जमींदार की भूमिका से अपने को अलग नहीं किया।

फैंक पर्लिन राज्य और राज्य निर्माण की अवधारणा को विशाल और दीर्घकालीन अन्तर-राजनीतिक, उपमहाद्वीपीय और अन्तर-राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में देखना चाहते हैं। इसके कई कारण हैं। राज्य का विकास लंबे समय में हुआ था, जिसमें विभिन्न शासनकाल और शताब्दियाँ (1 से 19वीं शताब्दी) शामिल थी। इसके अलावा औद्योगिकीकरण के पूर्व यूरोप और भारत की स्थिति में हो रहे परिवर्तनों को तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में भी देखा जाना चाहिए। इससे इस

परंपरागत मत का खंडन किया जा सकता है कि अंग्रेज़ों का प्रमुत्व स्थापित होने से पूर्व का भारतीय समाज बदलाव चाहता ही नहीं था।

बोध प्रश्न 1

1) मराठा राज्य के उदय के फितना आधारित दृष्टिकोण को संक्षेप में लिखिए।

....

....

....

....

....

2) मराठा राज्य व्यवस्था को बृहद परिप्रेक्ष्य में देखे जाने की क्यों जरूरत है ?

....

....

....

....

....

.3 मराठा राज्य संघ

अठारहवीं शताब्दी के दूसरे दशक में दक्कन और मध्य भारत में बाजीराव पेशवा प्रथम के अधीन मराठा शक्ति मुगलों के आधिपत्य को लगभग समाप्त कर चुकी थी। इसके बावजूद 1780 के दशक की संधियों में (मुगल और मराठों के बीच) मुगल बादशाह की वरीयता स्वीकार की जाती रही। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि चौथ वसूली के लिए औपचारिक रूप से मुगल बादशाह की अनुशंसा ली जाती रही, वस्तुत: यह मराठा संप्रभुता की स्थापना की पूर्वपीठिका थी (मसलन, गुजरात, मालवा, बेरार)

3.3.1 राजा और पेशवा

1719 ई. में बालाजी देशमुख को दिल्ली दरबार से चौथ और सरदेशमुखी का फरमान प्राप्त हुआ। मराठा राजा को सम्पूर्ण दक्कन (औरंगाबाद, बेरार, बीदर) और कर्नाटक का सरदेशमुख बना दिया गया।

1719 ई. में बालाजी विश्वनाथ ने साहू और उसके सरदार के बीच चौथ की वसूली और सरदेशमुखी का विभाजन कर दिया। इस वसूली का एक निश्चित अंश (सरदेशमुखी – चौथ का 34%) राजा के कोष में जमा होता था। इस प्रकार राजा अपने वित्तीय संस्थाओं के लिए काफी हद तक सरदारों पर निर्भरशील था।

आरम्भ में पेशवा केवल मुखिया प्रधान या प्रधानमंत्री होता था और उसका पद वंशानुगत नहीं था। पर 1720 ई. में बालाजी विश्वनाथ का पुत्र बाजीराव पेशवा बना। इसी समय से यह पद वंशानुगत हो गया। 1740 में बालाजी बाजीराव (नाना साहब) पेशवा बना। 1749 में साहू के निधन तक वह सतारा के राजा के अधीन था। इसके बाद उसने वस्तुत: राजा की संप्रभु शक्ति अपने हाथों में समेट ली।

पेशवा और उनके सरदार काफी लंबे समय से मराठा राज्य के विस्तार में प्रमुख भूमिका निभाते चले आ रहे थे। 1740 के दशक में मराठों ने मालवा, गुजरात, बुंदेलखंड, उत्तर में अहोक, राजस्थान, दोआब, अवध, बिहार और उड़ीसा पर अपना अधिकार जमा लिया। आंद्रे विंक का मानना है कि ये सारी जीतें फितना (निमंत्रण पर आक्रमण) के तहत ही सम्पन्न हुई थीं। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि 1740 के दशक के दौरान उत्तर में मराठा संप्रभुता

की स्थापना निर्णायक रूप में नहीं हो सकी थी और दक्षिण में भी इसकी स्थिति क्षणभंगुर और सीमित थी।

चित्र-6 मराठा पेशवा अपने मंत्रियों के साथ

3.3.2 नागपुर के भोसले

परसोजी भोसले पूना जिला के एक गाँव के मुखिया परिवार का वंशज था। उसने पहली बार उत्तर-पूर्व में पेशवा से स्वतंत्र होकर चौथ वसूलना शुरू किया। 1707 में जब साहु मुगल दरबार से वापस आया, तो वह सबसे पहले उपस्थित होने वाले सरदारों में से एक था। साहु ने उसके बेरार अभियान को मान्यता दी और बालाजी विश्वनाथ ने भी बेरार, गोंडवाना और कटक पर उसके स्वतंत्र अधिकार को मंजूरी दे दी। 1743 ई. में साहु ने बिहार, उड़ीसा, बरार और अवध प्रांत की चौथ की वसूली का जिम्मा और सरदेशमुखी रघुजी भोसले को सौंप दिया। 1755 में रघुजी की मृत्यु के बाद पेशवा ने भोसले की शक्ति पर अंकुश लगाया और सरंजाम को तीन हिस्सों में बाँटकर उन्हें काफी हद तक कमजोर बना दिया।

3.3.3 बड़ोदा के गायकवाड़

18वीं शताब्दी के दौरान जिन मराठा सरदारों ने मुगलों के गुजरात प्रांत पर आक्रमण का नेतृत्व किया, उनमें प्रमुख थे —बांदे, पवार और दामादे। दामादे गायकवाड़ों के सेनापति थे, 1730 के आसपास उनकी शक्ति में वृद्धि हुई।

1727 ई. में गुजरात के मुगल सूबेदार ने साहू को पूरे गुजरात के भू-राजस्व के 10% की सरदेशमुखी और गुजरात के दक्षिण की चौथ वसूली का अधिकार दिया। इसके बदले में साहू को उस प्रांत की लुटेरों से रक्षा करनी थी।

साहू की मौत के बाद, 1749 में पेशवा ने गुजरात की चौथ और सरदेशमुखी अपने और दाभाडे के बीच बांट लिया। 1751 ई. में गायकवाडों ने दाभाडों की जगह संभाली और 1752 में बड़ौदा को अपनी राजधानी बनाया।

नागपुर के भोसले की तरह गायकवाड़ शासक सरंजामदार की हैसियत से काम करते रहे। ये इंतजामकार मात्र थे, राजा नहीं।

3.3.4 इंदौर के होल्कर

mar प्रदेश हिन्दुस्तान और दक्कन का राजनीतिक और वाणिज्यिक संधि-स्थल था, इस इलाके पर 1699 से ही मराठों का आक्रमण होता आ रहा था। 1716 में पहली बार नर्मदा के पास मराठा चौकी स्थापित हुई और उसके तुरंत बाद चौथ का दावा किया गया। 1738 में दरोहा सराय की जीत के बाद पेशवा को मालवा W उप-राज्यपाल बनाया गया। इस समय तक (1730 के दशक में ही) पेशवा ने चौथ की वसूली और सरदेशमुखी अपने और सिंधिया, होल्कर और पवार के बीच बांट ली थी। पेशवा का मालवा के पूर्वी हिस्से पर अधिकार था जबकि पश्चिमी हिस्से के वंशगत सरंजाम होकर, सिंधिया और पवार थे।

सिंधिया और गायकवाड़ की तरह होल्कर भी ग्रामीण वतनदार का वंशज था। 1733 में उन्हें इंदौर का भार सौंपा गया, जिसे उन्होंने अपने राज्य या दौलत के रूप में विकसित किया। हालांकि तकनीकी तौर पर यह एक सरंजाम ही रहा। अपने उत्कर्ष के दिनों में भी होल्कर पेशवा के ''ति वफादार रहे। 1788 और 1793 के बीच होल्कर और सिंधिया के बीच लगातार झड़पें होती रहीं। राज्य विस्तार की दृष्टि से होल्कर सिंधिया से काफी पीछे था।

चित्र-7 एक सिंधिया प्रमुख

3.3.5 ग्वालियर के सिंधिया

18वीं शताब्दी के अंतिम ढाई दशकों के पहले तक ग्वालियर पर सिंधिया वंश का अधिकार नहीं था। इस परिवार ने मालवा में शक्ति अर्जित की थी और मुख्यालय उज्जैन था। सिंधिया भी पेशवा के अधीन सरंजामदार थे।

1761 के पानीपत के युद्ध में अपने पिता की सेना के सर्वनाश के बाद महादजी सिंधिया भाग खड़ा हुआ और उसने मालवा पर अपना अधिकार पुनर्स्थापित किया। मल्हार राव होल्कर की मृत्यु के बाद वह हिंदुस्तान का वास्तविक संप्रभु शासक बन गया। (देखें उपभाग 3.6.4 और 3.6.5).

मानचित्र-4

बोध प्रश्न 2

1) 1780 के दशक में मुगल बादशाह और मराठा संबंध में मराठों की स्थिति क्या थी?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

2) पेशवा और मराठा सरंजामदारों ने किस हद तक मराठा राज्य का विस्तार किया?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

3.4 संस्थागत विकास

मुगल कभी भी सही ढंग से महाराष्ट्र पर अधिकार नहीं जमा सके थे। महाराष्ट्र की परंपरागत प्रशासनिक और सम्पत्ति व्यवस्था अबाध गति से 18वीं शताब्दी तक कायम रही।

3.4.1 प्रशासनिक संरचना

मराठा राज्य को मोटे तौर पर अनियंत्रित और नियंत्रित इलाकों में बांटा जा सकता है।

अनियंत्रित इलाकों के अधीन राज्य का वह हिस्सा आता था, जो जमींदारों, स्वायत्त और अर्द्धस्वायत्त सरदारों के अधीन था। ये सरदार आंतरिक प्रशासन के मामले में स्वायत्त थे। राजा इस इलाके से नजराना वसूल किया करता था, पर भू-राजस्व की तरह (नियंत्रित इलाके में) इनकी राशि निश्चित नहीं थी। सरदार की शक्ति से नजराने की राशि तय होती थी। मजबूत सरदार कम नजराना दिया करते थे, जबकि कमजोर सरदारों को अधिक भुगतान करना पड़ता था।

नियंत्रित इलाकों या प्रत्यक्ष प्रशासन वाले इलाकों में राजस्व निर्धारण, प्रबन्धन और लेखा की समुचित व्यवस्था थी। यह इलाके वतनदारों (शब्दावली देखें) को सौंप दिए गये थे। देशमुख देशपांडे के अधीन 10 से लेकर 100 गाँव होते थे। वतनदार व्यवस्था के अंतर्गत अधिकार किसी व्यक्ति विशेष को नहीं, बल्कि कुल या परिवार को सौंपे जाते थे। वतनदारों का भूमि की उपज पर सामूहिक हिस्सा होता था, इसके अतिरिक्त उन्हें कुछ अधिकार प्राप्त थे, जैसे खेतिहरों से बतौर वेतन बकाया वसूली तथा सरकार की राजस्व मुक्त भूमि में हिस्सा। वतन के हिस्सों के बंटवारे में जमीन का बंटवारा नहीं होता था, बल्कि उपज का बंटवारा होता था। सैद्धांतिक तौर पर, किसी भी वंशानुगत संपदा को बेचने का अधिकार मान्य था।

कृषीय, वित्तीय या प्रशासनिक संकट के दौरान यह नियंत्रण ढीला किया जा सकता था और राजस्व वसूली में जमींदारों को थोड़े समय के लिए स्वतंत्रता दी जा सकती थी।

जोतदार दो तरह के होते थे। (क) पहली श्रेणी के जोतदार को मिरसदार कहते थे। ये स्थायी जोतदार होते थे, जिनके पास वंशानुगत मिल्कियत होती थी। (ख) दूसरी श्रेणी के जोतदारों को उपरिस कहते थे। ये अस्थायी जोतदार होते थे। दक्षिण महाराष्ट्र और गुजरात की जोतदारी व्यवस्था और भी जटिल थी।

18वीं शताब्दी में भी अधिकांश नियंत्रित इलाकों में परंपरागत रूप से चले आ रहे निर्धारण मानदंड ही कायम रहे। पेशवा के अधीन तंखा राजस्व निर्धारण का आधार था। यह प्रत्येक गाँव के लिए एक स्थायी निर्धारण-मानदंड था।

1750 के दशक के अंत और 1760 के दशक के दौरान कमल (या समापन) बंदोबस्त लागू किया गया। इसने तंखा बंदोबस्त के पूरक का काम किया और इसके अधीन नयी जोती गयी भूमि भी शामिल कर ली गई। यह भूमि की उर्वरता के निर्धारण और वर्गीकरण पर आधारित था और उपज में राजा का 1/6 हिस्सा होता था।

एक बार ग्रामीण कर निर्धारण (तंखा या कमल) का आंतरिक वितरण तय हो जाने पर, बाकी कार्य पाटिल (गाँव का मुखिया) या पूरे गाँव के जिम्मे छोड़ दिया जाता था। नियमित भू-राजस्व के अतिरिक्त सरकार कई अन्य कर लगाती थी (गाँव के खर्च के मद में), जिसका लेखा-जोखा गाँव और जिला पदाधिकारी को कम विस्तार या ममलतदार कहते थे।

अठारहवीं शताब्दी के दौरान, दक्कन, दक्षिणी मराठा ग्रामीण इलाकों, गुजरात, मध्य भारत और नागपुर में सालाना बंदोबस्त का रिवाज था।

1790 और 1810 के दशक में, जब पेशवा को सेना के खर्च और अंग्रेज़ों को भुगतान करने के लिए अधिक धन की जरूरत पड़ने लगी, तो राजस्व में बढ़ोत्तरी की गयी और सरकार की माँग में वृद्धि हुई।

महाराष्ट्र में एक चौथाई से ज्यादा राजस्व का भुगतान नगदी नहीं किया जाता था। अधिकतर, इस राजस्व को हुंडी (विनिमय-पत्र) के माध्यम से गाँव से जिला और जिले से पूना भेज दिया जाता था।

सैद्धांतिक तौर पर उत्तरी सरंजाम राज्यों (होल्कर, सिंधिया, ग्वालियर और भोसले) की प्रशासनिक व्यवस्था पेशवा की प्रशासनिक व्यवस्था का प्रतिरूप थी। इन राज्यों में केवल दीवान और पर्यवेक्षक पदाधिकारी अतिरिक्त होता था, जिसकी नियुक्ति पूना से होती थी।

3.4.2 दीर्घकालिक प्रवृत्तियाँ

14वीं-15वीं शताब्दी से पूरे उत्तर और पश्चिमी दक्कन मध्य प्रांतों, गुजरात और राजस्थान में कुछ घरानों ने पदों और अधिकारों पर कब्जा करके तेजी से शक्ति अर्जित की और अपने प्रभाव को बढ़ाते हुए राज्यों का निर्माण किया।

17वीं शताब्दी के महाराष्ट्र के बड़े घरानों (मसलन भोसले) ने प्रशासनिक ढाँचे में परिवर्तन किया। वित्तीय और सैन्य क्षेत्रों में भी बदलाव आया। नये सिरे से भूमि सर्वेक्षण किया गया। नगद राजस्व की वसूली होने लगी, लेखा-जोखा का नया ढंग विकसित हुआ।

राज्य की केंद्रीकृत शक्तियों और स्थानीय किसानों के संगठनों के बीच तनाव की स्थिति बनी रहती थी। राज्य की माँग को विरोध करने के लिए अक्सर वतनदार सभाएँ (गोता) बुलाई जाती थीं। 17वीं शताब्दी में ये सभाएँ लोकप्रिय प्रतिरोध का केन्द्र थीं। 18वीं शताब्दी में क्षेत्रीय और ग्रामीण मुखियाओं की सत्ता और शक्ति क्षीण हुई और नयी प्रशासनिक व्यवस्था सामने आयी।

ऊपर जिन घरानों का जिक्र किया गया है, उनकी आर्थिक शक्ति भूमि, श्रम और पूँजी के नियंत्रण पर आधारित थी। यही माध्यम शाही दरबार और स्थानीय किसान को जोड़ने का कार्य करता था।

बोध प्रश्न 3

1) नियंत्रित और अनियंत्रित इलाकों में क्या अंतर है?

....

....

....

....

....

2) वतनदार और राजस्व निर्धारण (कमल) को संक्षेप में समझाएँ।

....

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

3) सरंजाम राज्यों और पेशवा की प्रशासनिक व्यवस्था की तुलना करें।

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

3.5 समाज और अर्थव्यवस्था

3.5.1 खेतिहर समाज

18वीं शताब्दी तक आते-आते मराठा ग्रामीण राजनीतिक व्यवस्था पूरी तरह स्थापित हो चुकी थी। इसका मतलब यह हुआ कि कृषीय बस्तियों और जनसंख्या में भी विस्तार आ चुका था।

पूना के आसपास का इलाका असिंचित था और यहाँ जनसंख्या भी अपेक्षाकृत विरल थी। तत्कालीन तकनीकी विकास को ध्यान में रखें तो यह इलाका 18वीं शताब्दी के मध्य में अपने विकास के छोर पर था। इसी से पता चलता है कि क्यों मराठे दक्षिण में तंजोर, गुजरात और उत्तर में गंगा की घाटी जैसे स्थायी खेतिहर इलाकों पर कब्जा जमाने का प्रयत्न करते थे।

करों में हो रही वृद्धि और अन्य जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए उत्पादन बढ़ाने पर भी जोर दिया गया।

इस क्षेत्र में मराठा शासकों ने दो कदम उठाए। सबसे पहले उन्होंने रिआयती निर्धारण (इस्तवा), करों की माफी और कर्जों को सुनियोजित किया। इससे नयी भूमि पर खेती संभव हो सकी। दूसरे कदम के तहत कृषि संसाधनों के विकास के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया गया। उदाहरण के तौर पर, शिवाजी के शासनकाल में पुराने बांध की मरम्मत और नये बांध के निर्माण के लिए गाँव के मुखिया को इनाम में भूमि दी गयी थी।

इतिहासकार फुकुजावा ने बताया है कि मराठा शासकों के इन उपायों (राज्य द्वारा कृषि का विस्तार, राजस्व व्यवस्था आदि) के कारण कृषकों के बीच एक प्रकार की आर्थिक विषमता का जन्म हुआ। उन्होंने बताया है कि लोगों के पास 18 एकड़ से लेकर 108 एकड़ तक जमीन थी। उनके अनुसार 1790 से 1803 के बीच छोटे जोत पूरी तरह लुप्त हो गये। दूसरी ओर बड़े भूमिपतियों की संख्या में वृद्धि हुई।

18वीं शताब्दी तक आते-आते जनसंख्या, कराधान और खाद्यान्न की कीमत में वृद्धि होने से कृषकों के शोषण में वृद्धि हुई।

इस तथ्य के अनेक प्रमाण उपलब्ध है कि मंत्रियों, देशमुखों और सरंजाम प्राप्त सैनिक अधिकारियों, व्यापारियों, महाजनों जैसे गैर उत्पादक वर्ग का कृषि पर प्रभुत्व बढ़ता गया। इनमें से कई एक ही साथ कई भूमिकाएँ निभाते थे। इस प्रकार देहाती इलाकों में शनैः-शनैः सामाजिक विषमता बढ़ती गई।

ग्रामीण स्रोत पर नियंत्रण रखने के तीन तरीके थे —कर, इनाम, भूमि और वंशानुगत पद।

3.5.2 नगदी व्यवस्था

हम जिस काल का अध्ययन कर रहे है उसमें दक्षिणी दक्कन, बंगाल, बिहार और गुजरात के

तर्ज पर महाराष्ट्र की अर्थव्यवस्था में मुद्रा के निर्माण और नगदी फसलों के उत्पादन में वृद्धि हुई और बाजारों से इनका संबंध स्थापित हुआ।

17वीं-18वीं शताब्दी में शहरी और देहाती इलाकों में कर्ज देने वाली संस्थाएं कार्यरत थीं। ये संस्थाएं कर्ज से लदे कुलीन वर्ग और किसानों को ऋण देने के साथ-साथ, रोजाना के आर्थिक कार्यकलापों में भी हिस्सा लेती थीं। 18वीं शताब्दी के दौरान पश्चिमी दक्कन में तांबे और कौड़ियों का आयात सक्रिय और विकसित नगदी स्थानीय बाजारी केन्द्रों की मौजूदगी की ओर संकेत करता है।

पश्चिमी दक्कन के ग्रामीण बाजारों में ही नगदी का आदान-प्रदान नहीं होता था, बल्कि खेतिहर मजदूरों की रोजाना और मासिक मजदूरी, हस्तशिल्प उत्पादन और घरेलू कार्यों के लिए भी नगद भुगतान किया जाता था।

छोटे बाजारी शहरों, महत्वपूर्ण सरदारों के रिहायशी मकानों और बड़े नगरों में भी बड़े और छोटे टकसाल देखने को मिलते थे।

वस्तुत: 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रचलित ग्रामीण नगदी व्यवस्थाओं की सूचना बड़े पैमाने पर मिलती है। महाराष्ट्र में किसानों, खेतिहर मजदूरों, शिल्पियों और सैनिकों द्वारा नगद और वस्तु में कर्ज लेने के भरपूर प्रमाण उपलब्ध हैं। कर्ज लेने और उसे लौटाने से संबंधित लिखित दस्तावेज भी उपलब्ध हुए हैं। इससे पता चलता है कि साधारण व्यक्ति भी इस व्यवस्था से पूरी तरह परिचित था।

बोध प्रश्न 4

1) 18वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में कृषकों का शोषण कैसे बढ़ा ?

....

....

....

....

....

2) नगदी स्थानीय बाजारों के संकेतों का उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

3.6 अन्य राज्यों के साथ मराठों के संबंध

3.6.1 बंगाल

1740 ई. में नादिरशाह के आक्रमण और अलीवर्दी खाँ की मृत्यु के शीघ्र बाद बंगाल, बिहार और उड़ीसा के मुगल प्रांत के नवाब ने अपने प्रतिद्वंदियों के खिलाफ पेशवा से मदद मांगी। प्रतिद्वंद्वी दल को रघुजी भोंसले का समर्थन प्राप्त था। इस सहायता के बदले 1743 में इस इलाके का चौथ पेशवा को सौंप दिया गया। हालाँकि, बाद में रघुजी भोंसले की अपील पर साहू ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा का चौथ और सरदेशमुखी रघुजी भोंसले को सौंप दिया।

1751 की संधि के तहत नवाब ने नागपुर के भोंसले को बंगाल, बिहार और उड़ीसा के चौथ के रूप में 12 लाख रुपया देना स्वीकार किया।

3.6.2 हैदराबाद

दक्कन के वायसराय के रूप में 1715 से 1717 तक निजाम ने दक्कन में मराठों के चौथ और सरदेशमुखी के दावे का लगातार विरोध किया और दोनों पक्षों में बराबर संघर्ष होता रहा। 1720 के आसपास उसने कृषि और राजस्व पदाधिकारियों को मराठों द्वारा वसूली को रोकने के लिए प्रोत्साहित किया। 1724 में उसने पेशवा को इस वसूली की अनुमति दे दी। इसके एवज में पेशवा को निजाम के विरोधियों से उसकी रक्षा करनी थी। 1725–26 में मराठों द्वारा कर्नाटक पर आक्रमण करने के बाद यह संधि टूट गयी। अत: निजाम ने दक्कन सूबे की राजस्व वसूली का जिम्मा कोल्हापुर के सांभाजी को सौंप दिया। 1728 में पेशवा ने पालखेड में निजाम को हरा दिया, इसके बाद ही निजाम कोल्हापुर से संबंध समाप्त करने के लिए तैयार हुआ।

1752 में पूना और हैदराबाद के बीच का संघर्ष अपनी चरम सीमा पर था, इस समय गोदावरी और ताप्ती के बीच बरार के पश्चिमी हिस्से पर मराठों ने कब्जा जमा लिया।

3.6.3 मैसूर

मराठों ने अपना क्षेत्र तुंगभद्र तक फैला लिया था और मैसूर के हैदरअली और टीपू सुल्तान से उनका बराबर संघर्ष होता रहता था। उन्होंने 1726 ई. में मैसूर से नजराना भी वसूल किया था। 1764–65 और 1769–72 में पेशवा ने हैदरअली के खिलाफ सफल अभियान किया और 1772 की संधि के अनुसार हैदर के हाथ से तुंगभद्र का दक्षिणी क्षेत्र निकल गया।

1776 के बाद, हैदरअली ने मराठा राज्य के कृष्णा-तुंगभद्र दोआब इलाके पर आक्रमण किया। 1780 में आकर ही अंग्रेजों के खिलाफ मैसूर और मराठों के बीच अल्पकालीन संधि हुई।

3.6.4 राजस्थान

इस इलाके में मराठों ने नियमित प्रत्यक्ष प्रशासन स्थापित नहीं किया। हालाँकि 18वीं शताब्दी के तीसरे-चौथे दशक के दौरान मराठों ने राजपूत राज्यों, खासकर बूँदी, जयपुर और मारवाड़ के अंदरूनी कलह में कभी-कभी हस्तक्षेप किया।

1735 में बाजीराव के राजस्थान जाने के पूर्व केवल छोटे राज्य मराठों को चौथ देते थे, पर अब उदयपुर और मेवाड़ ने भी चौथ देना स्वीकार किया। पानीपत के युद्ध के बाद मराठों की बिगड़ी स्थिति के कारण यह चौथ कुछ दिनों तक स्थगित रहा, पर पुन: होल्कर और उसकी मृत्यु के बाद सिंधिया, पेशवा और बादशाह के प्रतिनिधि के रूप में चौथ की वसूली करते रहे।

3.6.5 मुगल शासक

जब 1752 ई. में अहमदशाह अब्दाली ने लाहौर और मुल्तान पर कब्जा जमा लिया, तब मुगल बादशाह ने मराठों से रक्षा के लिए मदद मांगी। 1752 ई. में बादशाह ने एक संधि के तहत मल्हार राव होल्कर और जयप्पा सिंधिया को पंजाब और सिंध और दोआब के चौथ के साथ-साथ अजमेर और आगरा की सूबेदारी देने का वादा किया। इसके एवज में होल्कर और सिंधिया को बाहरी दुश्मनों और षडयंत्रकारियों से मुगल बादशाह की रक्षा करनी थी। पर 1761 के पानीपत के युद्ध में मराठे अहमदशाह अब्दाली के सामने टिक नहीं पाये और उनकी पराजय हुई। पंजाब और राजस्थान उनके कब्जे में नहीं रहा।

1784 में शाहआलम ने दिल्ली और आगरा की प्रशासन व्यवस्था में परिवर्तन किया और मासिक भत्ता लेकर दिल्ली और आगरा का भार सिंधिया पर सौंप दिया। पेशवा को रिजेंट (Regent) और सिंधिया को डिपुटी रिजेंट (Deputy Regent) की उपाधि प्रदान की गई। इसी बीच रोहिल्ला सरदार गुलाम कादिर खाँ ने शाहआलम को अपदस्थ कर दिया, पर शीघ्र ही सिंधिया ने रोहिल्ला सरदार को निकाल बाहर किया और पुन: शाहआलम ने सिंधिया को उपाधि वापस कर दी।

इस उपलब्धि से सिंधिया को कोई खास शक्ति नहीं मिली; क्योंकि अधिकांश मुगल सरदार बादशाह के नियंत्रण में नहीं थे। अतः, सिंधिया ने राजपूतों पर अपना दबाव बढ़ाना शुरू किया।

3.6.6 ईस्ट इंडिया कम्पनी

1739 में मराठों ने पुर्तगालियों से बेसिन छीन लिया। इसके बाद कम्पनी की बम्बई शाखा ने बंगाल की किलेबंदी करने का निश्चय किया। उन्होंने साहू के साथ संधि की, जिसके तहत मराठा राज्य में अंग्रेज़ों को मुक्त व्यापार करने की छूट मिल गयी।

मराठा राज्य संघ (पेशवा और बरार और सतारा के राजा) के विभिन्न गुटों और पेशवा परिवार की अन्दरूनी लड़ाई का फायदा कम्पनी ने उठाया और वह मराठा राज्य के मामले में हस्तक्षेप करने लगी।

इकाई 10 में कम्पनी के षड़यंत्र और उनकी सरंजामदारों के पतन के कारणों और घटनाओं पर विस्तार से चर्चा की जाएगी।

बोध प्रश्न 5

1) क्षेत्रीय शक्तियों और ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ मराठों के संबंध का उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

....

3.7 सारांश

इस इकाई में हमने निम्नलिखित मुद्दों पर विचार-विमर्श किया:

- मराठा राज्य व्यवस्था पर नवीन इतिहास लेखन
- मराठा राज्य संघ का उदय और इसके राज्य का विस्तार, जो मुगल शासन के ढाँचे में विकसित हुआ।
- मराठा राज्य के संस्थानों का विकास। इस बात का भी संकेत किया गया कि इतिहासकार मराठा राज्य की संपत्ति और प्रशासन संबंधी प्रक्रिया को एक बृहद पैमाने पर देखने की कोशिश कर रहे हैं जिसकी शुरुआत 15वीं शताब्दी से हो रही थी। वे इस विकास को मराठा राज्य काल की अवधि तक ही सीमित नहीं रख रहे हैं।
- खेतिहर समाज की प्रकृति और नगदीकरण की प्रक्रिया।
- क्षेत्रीय शक्तियों और ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ मराठों का संबंध।

3.8 शब्दावली

देशमुख: जिला जमींदार

देशपांडे: वंशानुगत जिला लेखपाल

फितना: फितना (मराठी): विद्रोह, बगावत
(अरबी-फारसी) विश्वासघात

वतन (दार): वंशानुगत प्राप्त अधिकार (का अधिकारी)

सरंजाम: भूमि या भू-राजस्व का जिम्मा।

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखें भाग 3.2
   इस प्रश्न के अन्तर्गत आप उल्लेख करें कि किस प्रकार आपसी संघर्ष का लाभ उठाया जाता था इसमें कभी दमन नीति अपनायी जाती थी, कभी मेल मिलाप की।

2) देखें भाग 3.2
   इस प्रश्न के अन्तर्गत क) राज्य के दीर्घावधि विकास और ख) परम्परागत राष्ट्रों की संरचना में सुधार, का उल्लेख कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) देखें भाग 3.3
2) देखें उपभाग 3.3.1 से 3.3.5
   उपभाग 3.6.4 और 3.6.5 भी देखें

बोध प्रश्न 3

1) देखें उपभाग 3.4.1
2) क) और ख) देखें उपभाग 3.4.1
3) देखें उपभाग 3.4.1
4) देखें उपभाग 3.4.2

बोध प्रश्न 4

1) देखें उपभाग 3.5.1
2) क) और ख) देखें उपभाग 3.5.2

बोध प्रश्न 5

1) देखें उपभाग 3.6.1 से 3.6.6